International Journal of Applied Research 2018; 4(10): 57-58

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(10): 57-58
www.allresearchjournal.com
Received: 15-08-2018
Accepted: 20-09-2018

डॉ. अरविन्द मैन्दोला
सह–आचार्य ''चित्रकला'',
राजकीय महाविद्यालय, सांगोद,
कोटा, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ. अरविन्द मैन्दोला
सह–आचार्य ''चित्रकला'',
राजकीय महाविद्यालय, सांगोद,
कोटा, राजस्थान, भारत

राजस्थानी लघुचित्र परम्परा में आध्यात्मिकता

डॉ. अरविन्द मैन्दोला

सारांश
राजस्थानी लघुचित्र परम्परा के सचित्र ग्रंथों का अंकन शास्त्रीय धरातल पर आधारित रहा हैं। आध्यात्म चित्रों के सृजन में मुख्य आधार रहा हैं। राजस्थान में कला और धर्म का सदियों से अन्योन्याश्रित सम्बद्ध रहा हैं। कला ने धर्म को रूप प्रदान किया तो धर्म ने कला को सावित्वकता प्रदान की हैं। राजस्थानी कला को उदात्त धार्मिक अविष्कार का विषय भी माना जा सकता हैं। वैदिक काल की दिव्य शक्तियाँ प्रकृति के उदात्त अवस्था की प्रतीक थी। धार्मिक चित्रों में निराकार साक्षात सच्चिदावस्था हैं। कलाकार के अनुसार ब्रहत्व प्राप्त करने का अर्थ ही ब्रहम की शाश्वत आनन्दावस्था प्राप्त करना और मोक्ष प्राप्त करना हैं। राजस्थान की कला और धर्म का सदियों से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा हैं। यहाँ के शासको का कोई भी धर्म रहा हो किन्तु उनकी सहिष्णुवादी नीति के कारण जन–सामान्य अपने विश्वास के अनुरूप किसी भी प्रचलित धर्म को स्वीकार करने के लिये स्वतंत्र था।

कूटशब्दः प्रभावोत्पादकता, अभिप्रायों, सावित्वकता, व्यक्तिवादी, उदात्त, आनन्दावस्था, बहुदेववाद, दिव्यत्व, शाश्वत, निराकार, सहिष्णुवादी, एकेश्वरवाद

प्रस्तावना
राजस्थानी लघुचित्र परम्परा के सचित्र ग्रंथों एवं लघुचित्रों का अंकन शास्त्रीय धरातल पर आधारित रहा हैं। राजस्थानी लघुचित्रों में प्रारम्भ से लेकर अब तक विषयों में प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करनें में चित्रकारों ने निश्चित रंगों, रेखाओं, प्रतीकों एवं अभिप्रायों की रचना अपने परम्परागत मूल्यों, मौलिक चिन्तन एवं मनन के आधार पर की हैं। आध्यात्म लघुचित्रों के सृजन का मुख्य आधार रहा हैं। राजस्थान में कला और धर्म का सदियों से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा हैं। कला ने धर्म को रूप प्रदान किया तो धर्म ने कला को सावित्वकता प्रदान की हैं।
राजस्थानी शासकों के अपने–अपने अराध्य देव रहे हैं। अतः उनके शासन काल में उस सम्प्रदाय विशेष से चित्र–परम्परा देखने को मिलती हैं। राजस्थानी लघु चित्रण परम्परा में धार्मिक चित्रण के साथ ही सामाजिक एवं व्यक्तिवादी चित्रण अधिक हुआ हैं। राजस्थानी लघुचित्र शैली में रघुवंश, श्रीमद्भागवत् गीता, महाभारत, आदि के लघुचित्रों से इसकी उचित पुष्टि होती हैं।

आध्यात्मिक चित्रण :– भारतीय कला को उदात्त धार्मिक आविष्कार का विषय भी माना जा सकता हैं। वैदिक काल की दिव्य शक्तियाँ प्रकृति के उदात्त अवस्था की प्रतीक थी। धार्मिक चित्रों में निराकार साक्षात सच्चिदानन्द हैं। कलाकारों के अनुसार ब्रह्मत्व प्राप्त करने का अर्थ ही ब्रह्म की शाश्वत आनन्दावस्था प्राप्त करना और मोक्ष प्राप्त करना हैं। चित्र बनाते समय भी शाश्वत आनन्द की अवस्था प्राप्त होती हैं। इसी निर्गुण निराकार ब्रह्म की सगुण साकार अवस्था व्यावहारिक उपासना के लिए आवश्यक मानी गयी और राजस्थान भक्ति का केन्द्र बन गया। इस आध्यात्मिक दिव्य तत्व की आराधना करने के लिए ही काव्य, वास्तु, संगीत, नृत्य, चित्र आदि कलाओं का विकास हुआ। कलाकारों ने लघुचित्रों की सृष्टि करते समय एक ही लक्ष्य रखा वह था अपनी आध्यात्मिक धार्मिक भावनाओं को साकार करना, उसकी अभिव्यंजना के लिए योग्य माध्यम निर्माण करना और प्रतीकों द्वारा ईश्वर के दिव्यत्व का प्रतिरूपण करना।
राजस्थान में कला और धर्म का सदियों से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा है। राजस्थानी आध्यात्मिक क्षेत्र में भी अग्रणी रहा हैं। यहाँ के शासकों का कोई भी राजधर्म रहा हो, किन्तु उनकी सहिष्णुतावादी नीति के कारण जन–सामान्य अपने विश्वास के अनुरूप किसी भी प्रचलित धर्म को स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र था। यहाँ एक ओर बहुदेववाद देखने को मिलता हैं, वहीं दूसरी ओर एकेश्वरवाद भी था उस तरह भारतीय संस्कृति की एकता में अनेकता एवं अनेकता में एकता स्पष्टतः दिखाई देती हैं। यहाँ प्राचीन काल से ही वैदिक धर्म का प्रचार एवं प्रसार रहा हैं। छठीं शताब्दी से यहाँ सूर्य पूजा एवं 8–15 वीं शताब्दी तक ब्रह्मा की पूजा लोकप्रिय थी। इसके अतिरिक्त शैव मत भी एक लम्बे

समय तक चल रहा हैं। इस समय शैव मन्दिर एवं अर्द्ध नारीश्वर स्वरूप की स्तुति का चित्रण प्राप्त होता हैं।

प्रारम्भिक लघुचित्रों में जैन एवं हिन्दू धर्म का विशेष प्रभाव दिखाई देता हैं। जिसमें धार्मिक आध्यात्म के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक भावों का अंकन विशेष हैं। गीत गोविन्द के लघुचित्रों में कृष्ण की विभिन्न प्रकार की प्रेम लीलाएँ सहज प्रक्रिया के रूप में दर्शक को श्रृंगारिकता के साथ–साथ आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर किया हैं। राजस्थान में अनेक सम्प्रदायों ने भक्ति और आध्यात्मिक सद्भाव की धारा प्रवाहित करने में अपना अमूल्य योगदान दिया। आरम्भिक राजस्थानी लघु चित्रकला के प्रथम दर्शन का स्त्रोत मेवाड़ शैली हैं। महाराणा कुम्भा (1433–1468 ई.) के शासन काल में गीत–गोविन्द, बाल गोपाल स्तुति (1435 ई.) आदि कई सुन्दर ग्रंथों की रचना करवाई। महाराणा कुम्भा के पश्चात् राणा सांगा और संग्राम सिंह (1509–1528 ई.) काल में बने लघुचित्रों में भागवत पुराण का परिजात अवतरण (1540 ई.) जगतसिंह प्रथम (1628–1652 ई.) काल में वल्लभ सम्प्रदाय के प्रसार के कारण श्री कृष्ण के जीवन से संबंधित चित्रों का निर्माण अधिक हुआ।

गीत गोविन्द (1629 ई.) भागवत पुराण, (1648 ई.) के चार स्कन्द चटख रंगों में बने हैं। रामायण एवं आर्ष रामायण की एक प्रति, 1651 ई. में चित्तौड़ में चित्रित की गई थी, इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता हैं कि महाराणा राजसिंह के काल में अनेक भक्तिकालीन व रीतिकालीन काव्य ग्रंथों से प्रेरित विषय स्वतंत्र या ग्रंथ चित्रों के रूप में चित्रित हुए। जयसिंह (1680–1698 ई.) काल में गीत–गोविन्द, श्रीमद्भागवत पुराण (1663–1678 ई.) कृष्णलीला संबंधी विषयवस्तु को आधार बनाकर प्रेम, समर्पण, श्रद्धा, उत्सर्ग, श्रृंगार इत्यादि भावनाओं को व्यक्त करने वाले अनेकानेक लघुचित्रों में तत्कालीन समाज की आध्यात्मिक झांकी दिखाई देती हैं।

राजस्थानी कलाकारों ने अपनी कल्पना शक्ति द्वारा राम, श्री कृष्ण–राधा आदि आध्यात्मिक शक्तियों की रचना की और कला–सृजन के कार्य में योग, समाधि और साधना की आवश्यकता महसूस की हैं, क्योंकि इंदिय संवेदनाओं से अतीत अदृश्य आध्यात्मिक तत्व को दृश्य रूप में प्रतिरूपित करने हेतु प्रतिभा, कल्पना और योग साधना की आवश्यकता होती हैं। नाथद्वारा चित्र शैली में श्रीनाथ के प्राकट्य एवं लीलाओं से सम्बन्धित तथा अष्टयाम की सेवा पूजा के असंख्य लघुचित्र कागज एवं कपड़े पर बने। नाथद्वारा के पूर्णिमा, दानलीला, पुष्ट मार्गी वल्लभ सम्प्रदाय की प्रचलित कथाओं के सभी पात्रों एवं अभिप्रायों की कलात्मक अभिव्यक्ति हैं। बीसवी सदी में नाथद्वारा की यह लोक चित्र शैली अपने धार्मिक प्रभाव से प्रसिद्ध हुई हैं। जोधपुर में श्री बालकृष्ण, श्री मदनमोहन, श्याम मनोहर आदि के मन्दिर जोधपुर की जनता को जहाँ भक्ति रस की धारा में रसमग्न करते रहे हैं। विजयसिंह (1753–1793 ई.) के समय में भक्ति और श्रृंगार रस के लघुचित्रों का निर्माण हुआ। विजयसिंह के काल तक राधा–कृष्ण एवं वैष्णव धर्म से सम्बन्धित चित्र बहुतायत से मिलते हैं। बीकानेर शैली में भागवत पुराण, अजमेर में हिन्दू, मुस्लिम और ईसाई धर्म का समन्वय देखने को मिलता हैं, उदयपुर में दुर्गा सप्तशती 1740 ई. के लगभग दुर्गा की अराधना में देवी–देवताओं के साथ राक्षसों का मानवीय कूरूप चेहरों का चित्रण हुआ जो धर्म एवं अधर्म के बदलते रूप सौन्दर्य को दर्शाते हैं। किशनगढ़ चित्रशैली में राजा सावंतसिंह ने 1723 से 1731 तक मनोरथ मंजरी, रसिक–रत्नावली और बिहार–चन्द्रिका की रचना कर कृष्ण–भक्ति–काव्य के विस्तार में विशेष योगदान दिया। बूँदी लघुचित्र शैली में भावसिंह के समय कृष्णलीला सम्बन्धी अनेक लघुचित्र उपलब्ध हैं। मेवाड़ एवं हाड़ोती में कृष्ण–लीला, श्री ब्रजनाथजी की उत्सव–लीला आदि संबंधी असंख्य चित्र बने।

कुशवाहों की समृद्ध–परम्परा होने के कारण आमेर की लघुचित्रकला कला के विकास की महत्वपूर्ण कड़ी हैं। प्राचीनतम उदाहरणों में ''रज्मनामा'' और महाराजा मानसिंह के ही शासन–काल का (1590) तिथियुक्त सचित्र ग्रंथ ''यशोधर–चरित्र'' प्रारम्भिक महत्वपूर्ण साक्ष्य हैं। इसी क्रम में जयपुर के प्रसिद्ध ईसरदा ठिकाणे का ''सचित्र भागवत'' (1540–80) आमेर कला के नए आयाम प्रस्तुत करता हैं।

सवाई प्रतापसिंह' (1779–1803 ई.) के समय रामायण, महाभारत जैसी महान रचनाओं पर चित्र बनने लगे। इस समय आध्यात्मिकता का एक नया युग शुरू हुआ।

सन्दर्भ

1. जयसिंह नीरज :– स्प्लैण्डर ऑफ राजस्थानी पेन्टिग पृ. 22
2. कृष्ण चैतन्य :– ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन पेन्टिग, राजस्थानी ट्रेडिशन पृ. 118
3. रघुवीर सिंह :– पूर्व आधुनिक राजस्थान, पृ. 101
4. मोती चन्द :– बून्दी मार्ग पत्रिका पृ. 50
5. प्रमोद चन्द :– बून्दी पेन्टिग पृ. 3